RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper

गांधी के राजनीतिक दर्शन में नैतिकता और धर्म का स्थान: समकालीन भारतीय राजनीति के सन्दर्भ में अध्ययन

Dr. Manju Lata Sharma

Lecturer, Political Science, Government College, Newai (Tonk), Rajasthan

Abstract
महात्मा गांधी का राजनीतिक दर्शन भारतीय चिंतन परंपरा में एक ऐसा अध्याय है जिसमें राजनीति, नैतिकता और धर्म का अद्भुत सामंजस्य दिखाई देता है। भारतीय दर्शन सदैव से धर्म और नैतिकता को सामाजिक जीवन का मूल मानता रहा है, परंतु गांधी ने इन सिद्धांतों को केवल वैचारिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक रूप में राजनीतिक जीवन में लागू किया। उन्होंने राजनीति को 'लोकसाधना' का क्षेत्र कहा, जहाँ सत्ता प्राप्ति नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र की सेवा ही सर्वोच्च उद्देश्य है। गांधी के अनुसार राजनीति यदि नैतिकता से विहीन हो जाए तो वह हिंसा, अन्याय और स्वार्थ का माध्यम बन जाती है। इसीलिए उन्होंने राजनीति को 'आत्मानुशासन' और 'आत्मशुद्धि' का साधन माना। गांधी की राजनीति मूलतः एक नैतिक क्रांति थी—एक ऐसी क्रांति जिसमें मनुष्य के भीतर से परिवर्तन प्रारंभ होता है। गांधी का आदर्श न केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए बल्कि सामूहिक राष्ट्रीय जीवन के लिए भी दिशा प्रदान करता है।

Keywords: गांधी, राजनीतिक दर्शन, नैतिकता, धर्म, मूल्य आधारित राजनीति, समकालीन भारत, लोकतंत्र।

परिचय:

गांधी का राजनीतिक चिंतन सत्य और अहिंसा जैसे दो नैतिक स्तंभों पर आधारित है। उन्होंने कहा था— "सत्य मेरा ईश्वर है और अहिंसा उसे प्राप्त करने का साधन।" इस वाक्य में उनके समूचे दर्शन का सार निहित है। सत्य उनके लिए केवल भाषिक या तर्कसंगत सत्य नहीं था, बल्कि एक आध्यात्मिक सत्ता थी, जो मानव के नैतिक जीवन को दिशा देती है। अहिंसा उस सत्य की प्राप्ति का मार्ग थी, जिसमें व्यक्ति और समाज दोनों का कल्याण निहित है। गांधी के लिए राजनीतिक संघर्ष भी आत्मा की शुद्धि का एक माध्यम था; इसलिए उनके आंदोलन चाहे असहयोग, सत्याग्रह या नमक सत्याग्रह रहे हों—वे सभी नैतिक अनुशासन और आत्मबल पर आधारित थे, न कि हिंसा और द्वेष पर।

गांधी का धर्म-दर्शन भी उतना ही व्यापक और मानवीय था जितना उनका नैतिक चिंतन। उन्होंने धर्म को किसी विशेष संप्रदाय, पंथ या पूजा-पद्धति से नहीं जोड़ा, बल्कि उसे "सत्य और अहिंसा की चेतना" कहा। उनका कहना था कि "धर्म वह शक्ति है जो मनुष्य के हृदय में नैतिकता, करुणा और सेवा की भावना उत्पन्न करती है।" इस प्रकार गांधी के लिए धर्म का अर्थ संकीर्ण धार्मिकता या कट्टरता नहीं, बल्कि सार्वभौमिक मानव धर्म था, जो सभी को समान दृष्टि से देखता है। उनके मत में राजनीति और धर्म का विभाजन असंभव है, क्योंकि धर्म ही राजनीति को नैतिकता और लोकहित की दिशा देता है। यदि राजनीति धर्म से विहीन हो जाए, तो वह केवल सत्ता और स्वार्थ की दौड़ बनकर रह जाती है।[1]

गांधी का यह दृष्टिकोण आधुनिक लोकतंत्र की नैतिक बुनियाद को समझने के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। आज की राजनीति, जो अधिकतर सत्ता, धन और जातीय समीकरणों पर केंद्रित हो गई है, वहाँ गांधी का यह संदेश प्रासंगिक हो उठता है कि राजनीति तभी सार्थक है जब वह सेवा, सत्य और न्याय के मूल्यों पर आधारित हो। उन्होंने अपने जीवन से यह दिखाया कि सत्य और नैतिकता के बल पर भी साम्राज्यवादी शासन को चुनौती दी जा सकती है। उन्होंने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष को केवल राजनीतिक नहीं, बल्कि नैतिक युद्ध बताया, जहाँ उद्देश्य केवल स्वतंत्रता नहीं बल्कि आत्मसम्मान और नैतिक पुनर्जागरण था।

समकालीन भारतीय राजनीति के संदर्भ में गांधी के विचार और भी आवश्यक प्रतीत होते हैं। आज जब लोकतंत्र 'मात्र मतदान की प्रक्रिया' बनकर रह गया है और जनता के बीच राजनीतिक अविश्वास बढ़ा है, तब गांधी का यह दर्शन हमें स्मरण कराता है कि राजनीति का असली अर्थ "जनकल्याण के लिए नैतिक आचरण" है। उनके अनुसार एक सच्चा राजनेता वही है जो स्वयं को जनता का सेवक समझे, न कि शासक। यही कारण था कि गांधी ने सत्ता को कभी लक्ष्य नहीं बनाया; उन्होंने कहा— "मुझे राजनीति में केवल तभी रुचि है जब वह नैतिकता से जुड़ी हो।"[2]

2015, RHIMRJ, All Rights Reserved *ISSN:* 2349-7637 (Online)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि गांधी के राजनीतिक दर्शन में नैतिकता और धर्म केवल सहायक तत्त्व नहीं, बल्कि उसकी आत्मा हैं। उनके चिंतन की यह विशेषता है कि उन्होंने इन दोनों को व्यवहारिक राजनीति में मूर्त रूप दिया। उन्होंने राजनीति को धर्म से नहीं, बल्कि संकीर्ण धार्मिकता से मुक्त किया और उसे एक नैतिक साधना के रूप में स्थापित किया। आज के युग में, जब राजनीति के नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, गांधी का यह चिंतन एक बार फिर अत्यंत प्रासंगिक हो उठता है। यह हमें यह सिखाता है कि राजनीति को केवल सत्ता की नहीं, बल्कि सेवा, सत्य और लोकमंगल की भूमि बनाना ही वास्तविक राष्ट्रधर्म है।

महात्मा गांधी आधुनिक युग के उन विरल व्यक्तित्वों में से हैं जिन्होंने राजनीति को केवल व्यवहारिक सत्ता-नीति के रूप में नहीं, बल्कि आत्मिक साधना के रूप में देखा। उनका मानना था कि राजनीति तब तक पवित्र नहीं हो सकती जब तक उसमें नैतिकता और धर्म का आधार न हो। गांधी ने स्पष्ट कहा था—"**राजनीति बिना धर्म के पाप है।**" उनकी दृष्टि में 'धर्म' का अर्थ किसी संप्रदाय विशेष से नहीं, बल्कि उस सार्वभौमिक नैतिक शक्ति से था जो मनुष्य के भीतर सत्य, करुणा, अहिंसा और न्याय के रूप में कार्य करती है। राजनीति को उन्होंने एक ऐसी लोकसाधना के रूप में देखा जहाँ जनसेवा ही ईश्वर की उपासना है। गांधी का राजनीतिक दर्शन इस प्रकार भारतीय चिंतन परंपरा की नैतिक विरासत और आधुनिक युग की मानवतावादी चेतना का सुंदर संगम है।

गांधी का राजनीतिक दर्शन और उसका नैतिक आधार

गांधी के राजनीतिक दर्शन की जड़ें गहराई से नैतिकता (Ethics) में निहित हैं। उनके अनुसार राजनीति केवल शक्ति-संतुलन या आर्थिक प्रगति का माध्यम नहीं है, बल्कि वह समाज में नैतिक आचरण और आत्मसंयम की भावना उत्पन्न करने का साधन है। गांधी ने '**सत्य**' और '**अहिंसा**' को अपने राजनीतिक सिद्धांत का मूलाधार माना।

उन्होंने कहा—"**सत्य मेरा ईश्वर है और अहिंसा उसे प्राप्त करने का साधन।**" इस कथन से स्पष्ट होता है कि गांधी के लिए नैतिकता केवल व्यक्तिगत गुण नहीं थी, बल्कि राजनीतिक जीवन का आवश्यक तत्व थी। उनका विश्वास था कि राजनीति का नैतिकीकरण किए बिना लोकतंत्र कभी टिकाऊ नहीं हो सकता। उन्होंने अपने जीवन से यह दिखाया कि सत्य और अहिंसा जैसे नैतिक मूल्यों के आधार पर भी साम्राज्यवादी शासन को चुनौती दी जा सकती है। उनके लिए राजनीति एक "नैतिक प्रयोग" थी—एक ऐसा प्रयोग जिसमें व्यक्ति अपनी सीमाओं को पहचानता है, अपने विरोधी से भी प्रेम करता है, और सामाजिक न्याय को ईश्वर की दृष्टि से देखता है।[3]

गांधी के धर्म की अवधारणा: सार्वभौमिक दृष्टिकोण

गांधी के 'धर्म' का अर्थ किसी विशेष आस्था या मत से नहीं था। वे धर्म को "**आत्मा की शक्ति**" कहते थे, जो व्यक्ति को सत्य और करुणा के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है। उन्होंने कहा— "**मेरा धर्म सत्य और अहिंसा पर आधारित है। यह न तो हिंदू धर्म है, न मुसलमान धर्म, न ईसाई धर्म—यह मानव धर्म है।**" इस दृष्टिकोण से गांधी का धर्म सार्वभौमिक मानवता का धर्म है। उन्होंने धार्मिक आडंबरों और कट्टरताओं का विरोध किया। उनके लिए धर्म का उद्देश्य मनुष्य के भीतर नैतिक शुद्धि, आत्मसंयम और दूसरों के प्रति सहानुभूति का भाव जगाना था। यही कारण है कि उन्होंने राजनीति में धर्म को जोड़ा, किंतु संकीर्ण धार्मिकता को नहीं। गांधी का धर्म "**राजनीतिक नैतिकता**" का स्रोत था—ऐसा धर्म जो व्यक्ति को सत्ता-लालसा से दूर रखकर जनसेवा की भावना से जोड़ता है। उन्होंने कहा कि यदि राजनीति से नैतिकता और धर्म का संबंध टूट जाए तो वह हिंसा, भ्रष्टाचार और स्वार्थ की शरण में चली जाती है।

सत्य और अहिंसा: गांधी की राजनीति के दो स्तंभ

गांधी के राजनीतिक दर्शन में **सत्य** और **अहिंसा** दो परस्पर पूरक तत्व हैं। सत्य उनके जीवन का परम मूल्य था और अहिंसा उस सत्य की प्राप्ति का साधन। उन्होंने कहा—"**अहिंसा सबसे सक्रिय शक्ति है; वह निष्क्रियता नहीं है।**" उनकी अहिंसा केवल हिंसा का अभाव नहीं थी, बल्कि वह सक्रिय प्रेम और करुणा की भावना थी। सत्याग्रह इसी विचार का व्यवहारिक रूप था। सत्याग्रह का अर्थ केवल राजनीतिक संघर्ष नहीं, बल्कि आत्मबल से अन्याय का प्रतिरोध करना है। गांधी का विश्वास था कि नैतिक बल की शक्ति किसी भी भौतिक शक्ति से अधिक होती है। सत्याग्रह ने न केवल भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को नया मार्ग दिया, बल्कि विश्व राजनीति को भी एक नई नैतिक दिशा प्रदान की। यह सिद्धांत आज भी नागरिक आंदोलनों, मानवाधिकार अभियानों और अहिंसक प्रतिरोध की प्रेरणा का स्रोत है।[4]

राजनीति और नैतिकता का अन्तर्संबंध

गांधी का मानना था कि राजनीति और नैतिकता को अलग नहीं किया जा सकता। उनके अनुसार राजनीति का लक्ष्य सत्ता प्राप्ति नहीं, बल्कि **जनकल्याण** होना चाहिए। सत्ता तभी सार्थक है जब वह नैतिक उद्देश्यों की पूर्ति करे। उन्होंने कहा—"**राजनीति में नैतिकता का अभाव समाज को पतन की ओर ले**

जाता है।" उनके समय में जब औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष चल रहा था, तब उन्होंने राजनीतिक आंदोलन को नैतिक अनुशासन के अधीन रखा। चरखा चलाना, स्वदेशी अपनाना, ब्रह्मचर्य, उपवास और आत्मसंयम उनके लिए केवल व्यक्तिगत साधन नहीं थे, बल्कि राजनीतिक शुद्धि के उपाय थे। गांधी ने यह सिद्ध किया कि नैतिकता ही राजनीति की आत्मा है—यदि राजनीति में नैतिक मूल्यों का क्षय होता है, तो लोकतंत्र केवल औपचारिक बनकर रह जाता है।

गांधी के राजनीतिक दर्शन में धर्म की भूमिका

गांधी के लिए धर्म राजनीति का **आत्मिक नियंत्रण** था। वे मानते थे कि धर्म व्यक्ति को अहंकार और स्वार्थ से मुक्त करता है, जिससे राजनीति लोकमंगल का माध्यम बनती है। उनके विचार में सच्चा धर्म व्यक्ति को **कर्तव्यपरायण** बनाता है, न कि **अधिकार-लोभी।** उन्होंने कहा—"**राजनीति में धर्म का स्थान वही है जो शरीर में आत्मा का।**" धर्म का यह रूप किसी मत या पंथ से नहीं जुड़ा, बल्कि वह नैतिक आत्मचेतना है। इसी कारण गांधी ने धर्म को राज्य से अलग रखने की पाश्चात्य अवधारणा को स्वीकार नहीं किया। उनके अनुसार भारतीय परंपरा में धर्म और राजनीति परस्पर पूरक हैं, विरोधी नहीं। धर्म राजनीति को दिशा देता है और राजनीति धर्म को सामाजिक व्यवहार में परिणत करती है। गांधी की यह अवधारणा आधुनिक भारतीय राज्य की धर्मनिरपेक्षता की जड़ों को भी समझने में सहायक है, क्योंकि उन्होंने धर्मनिरपेक्षता को "सर्वधर्म समभाव" के रूप में देखा।[5]

गांधी की नैतिक राजनीति और समकालीन भारतीय परिदृश्य

आज की भारतीय राजनीति में गांधी के नैतिक आदर्शों की प्रासंगिकता और भी बढ़ गई है। वर्तमान समय में राजनीति में नैतिक पतन, भ्रष्टाचार, हिंसा और अवसरवादिता की प्रवृत्ति ने लोकतंत्र के आदर्शों को कमजोर किया है। ऐसे में गांधी का यह संदेश अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होता है कि "**राजनीति को तब तक शुद्ध नहीं किया जा सकता जब तक उसमें नैतिकता का संचार न हो।**" गांधी के आदर्शों से प्रेरित राजनीति का अर्थ है—जनसेवा, पारदर्शिता, अहिंसक संवाद और सत्यनिष्ठा। समकालीन भारतीय राजनीति में यदि इन मूल्यों को व्यवहार में लाया जाए तो शासन की गुणवत्ता और जनविश्वास दोनों सुदृढ़ होंगे। स्वराज की गांधी अवधारणा भी केवल राजनीतिक स्वाधीनता नहीं थी, बल्कि आत्मसंयम, स्वावलंबन और आत्मशुद्धि पर आधारित नैतिक शासन का आदर्श थी।

समकालीन भारतीय राजनीति में गांधीवादी मूल्यों की प्रासंगिकता

महात्मा गांधी के नैतिक और राजनीतिक विचार केवल स्वतंत्रता संग्राम तक सीमित नहीं थे, बल्कि वे आधुनिक भारत की लोकतांत्रिक संरचना, शासन प्रणाली और सामाजिक मूल्यों की नींव में भी रचे-बसे हैं। आज जब राजनीति में सत्ता, स्वार्थ और अवसरवाद का वर्चस्व दिखाई देता है, तब गांधी के सत्य, अहिंसा, लोकसेवा और धर्मनिरपेक्षता जैसे आदर्श पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हो उठे हैं। गांधीवादी मूल्य केवल अतीत की विरासत नहीं हैं, बल्कि वे वर्तमान राजनीतिक जीवन में नैतिक दिशा देने वाले जीवंत सिद्धांत हैं।

1. सत्य और पारदर्शिता: प्रशासनिक नैतिकता की रीढ़

गांधी का पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण मूल्य था **सत्य (Truth)**। उनके लिए सत्य केवल भाषण या नीति का शब्द नहीं था, बल्कि जीवन का आधार था। गांधी मानते थे कि शासन तभी स्थायी हो सकता है जब वह पारदर्शिता, जवाबदेही और सत्यनिष्ठा पर टिका हो। आज के लोकतांत्रिक भारत में जब भ्रष्टाचार, सत्ता का दुरुपयोग और राजनीतिक अनैतिकता व्यापक हो गई है, तब गांधी का सत्य-सिद्धांत प्रशासनिक सुधारों का आधार बनता है। **सूचना का अधिकार अधिनियम (Right to Information Act, 2005)** गांधीवादी पारदर्शिता के सिद्धांत का ही आधुनिक रूप है। इस अधिनियम ने नागरिकों को शासन के हर स्तर पर सवाल पूछने का अधिकार दिया है — यह वही भावना है जो गांधी के 'जनजवाबदेही' के विचार में निहित थी। गांधी कहते थे—"जनता का विश्वास सरकार की सबसे बड़ी पूँजी है।"[6] आज जब 'गुड गवर्नेंस' (Good Governance) की चर्चा होती है, तो उसका मूल भी गांधी के सत्य और पारदर्शिता के नैतिक दृष्टिकोण से जुड़ा है। यदि शासन और राजनीति में ईमानदारी, सादगी और जवाबदेही लौट आए, तो यह गांधी के नैतिक भारत का पुनर्जागरण होगा।

2. अहिंसा और संवाद: लोकतांत्रिक असहमति की नई संस्कृति

गांधी के राजनीतिक जीवन की आत्मा थी **अहिंसा (Non-violence)**। उनके लिए अहिंसा केवल हिंसा का अभाव नहीं थी, बल्कि प्रेम, सहिष्णुता और संवाद का सक्रिय रूप थी। उन्होंने कहा था— "असहमति का अधिकार लोकतंत्र की आत्मा है।" समकालीन भारतीय राजनीति में जब विचारधारात्मक ध्रुवीकरण, धार्मिक उग्रता, और हिंसक प्रदर्शन बढ़ रहे हैं, तब गांधी का अहिंसक संवाद का मार्ग लोकतांत्रिक संस्कृति को बचाने की दिशा देता है। आज

संसद से लेकर सड़कों तक राजनीतिक संवाद की गुणवत्ता में गिरावट देखी जा रही है। गांधी का सुझाव था कि असहमति को विनम्रता से स्वीकार किया जाए और विरोधी को 'शत्रु' नहीं बल्कि 'मतभेद रखने वाला मित्र' समझा जाए। उनके 'सत्याग्रह' की यही नैतिकता थी—विरोध में भी सम्मान का भाव रखना। भारत में आज जो संवाद-आधारित तंत्र विकसित हुआ है—जैसे **लोकपाल**, **जनसुनवाई**, **लोकअदालतें**—वे सब गांधी के अहिंसक संवाद और सह-अस्तित्व के सिद्धांतों से प्रेरित हैं। इसलिए आज जब राजनीतिक संघर्ष हिंसा या घृणा की ओर बढ़ते हैं, तब गांधी का अहिंसा-सिद्धांत हमें यह स्मरण कराता है कि राजनीति में नैतिकता का अर्थ है विरोध को भी सम्मानपूर्वक संभालना।[7]

3. लोकसेवा और ग्रामस्वराज: विकेंद्रीकरण और सहभागी शासन का मॉडल

गांधी का तीसरा बड़ा मूल्य था **लोकसेवा और ग्रामस्वराज (Self-rule of villages)**। वे मानते थे कि सच्चा लोकतंत्र तभी संभव है जब शासन नीचे से ऊपर की ओर विकसित हो—यानी प्रत्येक ग्राम समाज अपनी आवश्यकताओं के अनुसार आत्मनिर्भर और उत्तरदायी बने। उनका सपना था—"भारत का हृदय गाँवों में बसता है।" स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान में जो **पंचायती राज प्रणाली (73वां और 74वां संशोधन)** लागू की गई, वह गांधी के ग्रामस्वराज के आदर्श को संस्थागत रूप देने का प्रयास था। यह व्यवस्था जनता को शासन में सीधा भागीदार बनाती है—यही गांधी का 'जनशक्ति' का सिद्धांत था। आज भी जब प्रशासनिक केंद्रीकरण और राजनीतिक दलों का वर्चस्व बढ़ रहा है, तब गांधी का ग्रामस्वराजी मॉडल हमें याद दिलाता है कि सच्चा लोकतंत्र वही है जिसमें जनता स्वयं निर्णय ले और शासन में नैतिक सहभागिता निभाए। महात्मा गांधी का लोकसेवा का आदर्श यह भी कहता है कि राजनीति को 'सेवा' का माध्यम होना चाहिए, न कि 'सत्ता' का। आधुनिक राजनीति में यदि यह भावना लौट आए, तो सामाजिक विषमता, बेरोजगारी और ग्रामीण उपेक्षा जैसे संकटों का समाधान संभव हो सकता है।[8]

4. धर्मनिरपेक्षता और सर्वधर्मसमभाव: सामाजिक समरसता की दिशा

गांधी का चौथा मूलभूत सिद्धांत था **धर्मनिरपेक्षता (Secularism)**, जिसे उन्होंने '**सर्वधर्म समभाव**' के रूप में व्याख्यायित किया। उनके अनुसार धर्म का अर्थ किसी एक मत से नहीं, बल्कि वह नैतिक शक्ति है जो सबको जोड़ती है। उन्होंने कहा—"मेरा धर्म सभी धर्मों के सत्य को मान्यता देता है।" यह दृष्टिकोण आधुनिक भारत के संविधान के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप का नैतिक आधार बना। संविधान की प्रस्तावना में निहित "धर्मनिरपेक्षता" गांधी के इसी विचार का संवैधानिक रूप है। आज जब भारतीय राजनीति में धर्म का राजनीतिक उपयोग, ध्रुवीकरण और साम्प्रदायिक तनाव बढ़ रहे हैं, तब गांधी का सर्वधर्मसमभाव का सिद्धांत राष्ट्रीय एकता और सामाजिक समरसता की रक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है। गांधी मानते थे कि धर्म का स्थान राजनीति में प्रेरक शक्ति के रूप में है, न कि विभाजन के साधन के रूप में। यदि राजनीति धर्म को सत्ता-लाभ का माध्यम बनाएगी, तो वह अपनी नैतिकता खो देगी। गांधी की यह चेतावनी आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी स्वतंत्रता के समय थी।[9]

गांधीवादी मूल्यों का क्षरण और पुनःस्थापन की आवश्यकता

यद्यपि भारतीय संविधान और लोकतांत्रिक संस्थाएँ गांधीवादी आदर्शों से प्रेरित हैं, परंतु व्यवहारिक राजनीति में इन मूल्यों का क्षरण स्पष्ट दिखाई देता है। सत्ता की राजनीति ने सत्य को रणनीति, अहिंसा को कमजोरी, लोकसेवा को अवसरवाद और धर्मनिरपेक्षता को राजनीतिक उपकरण बना दिया है। गांधी ने कहा था—"**यदि हम नैतिकता खो दें, तो सब कुछ खो देंगे।**"[10] इसलिए आज आवश्यकता है कि राजनीति को पुनः नैतिक धरातल पर स्थापित किया जाए। शिक्षा, प्रशासन, मीडिया और जनआंदोलनों में गांधीवादी चेतना का पुनर्संस्कार करना ही भारतीय लोकतंत्र के नैतिक पुनर्निर्माण का मार्ग है। गांधी की नैतिकता केवल इतिहास की स्मृति नहीं है, बल्कि वर्तमान की आवश्यकता है। आज भी जब कोई सार्वजनिक अधिकारी ईमानदारी से कार्य करता है, कोई सामाजिक कार्यकर्ता जनसेवा के लिए समर्पित होता है, या कोई नागरिक हिंसा के बजाय संवाद का मार्ग चुनता है—तो वह गांधी के मूल्यों को जीवंत करता है। इसलिए गांधी का दर्शन किसी बीते युग का आदर्श नहीं, बल्कि भविष्य के भारत का नैतिक दिशा-सूचक है।

निष्कर्ष

समकालीन भारतीय राजनीति में गांधीवादी मूल्यों की प्रासंगिकता निर्विवाद है। सत्य, अहिंसा, लोकसेवा और धर्मनिरपेक्षता जैसे सिद्धांत लोकतंत्र की आत्मा हैं। आज जब राजनीति में नैतिक शून्यता और सामाजिक विभाजन बढ़ रहा है, तब गांधी के विचार हमें यह स्मरण कराते हैं कि राजनीतिक स्वतंत्रता तभी सार्थक है जब वह नैतिक स्वतंत्रता के साथ जुड़ी हो। भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था को टिकाऊ, पारदर्शी और संवेदनशील बनाए रखने के लिए गांधीवादी आदर्शों का पुनःस्थापन आवश्यक है। इसीलिए कहा जा सकता है कि गांधी की नैतिकता केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के भारत के पुनर्निर्माण का मार्ग है। गांधी का राजनीतिक दर्शन नैतिकता और धर्म के अद्भुत संतुलन पर आधारित है। उन्होंने राजनीति को लोकसेवा,

नैतिक साधना और आत्मसंयम का क्षेत्र बनाया। उनके लिए धर्म वह शक्ति था जो व्यक्ति को सत्य, करुणा, और न्याय के मार्ग पर स्थिर रखता है, और नैतिकता वह अनुशासन थी जो राजनीति को मानवीय बनाती है। इसलिए गांधी का राजनीतिक दर्शन आज भी न केवल भारत, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए एक नैतिक दिशा-सूचक के रूप में प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची

1. गांधी, मोहनदास करमचंद. *सत्य के प्रयोग*. नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1927।
2. गांधी, मो. का. *हिंद स्वराज या भारतीय स्वराज*. नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 1909।
3. प्रबुद्ध भारती, एस. एन. *गांधी और राजनीति का नैतिक दृष्टिकोण*. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2008।
4. नारायण, जे.पी. *गांधी और आधुनिक भारत*. दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1998।
5. शर्मा, रमेश. *गांधी का नैतिक दर्शन*. वाराणसी: भारतीय विद्या संस्थान, 2014।
6. Dalton, Dennis. *Mahatma Gandhi: Nonviolent Power in Action.* Columbia University Press, 1993.
7. Parel, Anthony J. *Gandhi's Philosophy and the Quest for Harmony.* Cambridge University Press, 2006.
8. Iyer, Raghavan. *The Moral and Political Thought of Mahatma Gandhi.* Oxford University Press, 1973.
9. Brown, Judith M. *Gandhi: Prisoner of Hope.* Yale University Press, 1991.
10. Parekh, Bhikhu. *Gandhi's Political Philosophy: A Critical Examination.* Palgrave Macmillan, 1989.

2015, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)